श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
दशमः स्कन्धः
द्वात्रिंशः अध्यायः
प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इति गोप्यः प्रगायन्त्यः प्रलपन्त्यश्च चित्रधा ।
रुरुदुः सुस्वरं राजन् कृष्णदर्शनलालसाः ॥१॥

पदच्छेद— इति गोप्यः प्रगायन्त्यः प्रलपन्त्यः च चित्रधा ।
रुरुदुः सुस्वरम् राजन् कृष्ण दर्शन लालसाः ॥

शब्दार्थ—

इति	२. इस प्रकार	रुरुदुः	१२. रोने लगीं
गोप्यः	३. भगवान् की प्यारी गोपियाँ	सुस्वरम्	११. करुणाजनक स्वर में
प्रगायन्त्यः	५. सस्वर गाने	राजन्	१. हे परीक्षित् !
प्रलपन्त्यः	७. प्रलाप करने लगीं तथा	कृष्ण	८. श्रीकृष्ण के
च	६. और	दर्शन	९. दर्शन की
चित्रधा ।	४. अनेक प्रकार से	लालसा ॥	१०. लालसा से वे

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् । इस प्रकार भगवान् की प्यारी गोपियाँ अनेक प्रकार से सस्वर गाने और प्रलाप करने लगीं । श्रीकृष्ण के दर्शन की लालसा से वे करुणा जनक स्वर में रोने लगीं ॥

द्वितीयः श्लोकः

तासामाविरभूच्छौरिः स्मयमानमुखाम्बुजः ।
पीताम्बरधरः स्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः ॥२॥

पदच्छेद— तासाम् आविरभूत् शौरिः स्मयमान मुख अम्बुजः ।
पीताम्बरधरः स्रग्वी साक्षात् मन्मथ मन्मथः ॥

शब्दार्थ—

तासाम्	५. उन गोपियों के मध्य	पीताम्बर	७. वे पीताम्बर
आविरभूत्	६. प्रकट हो गये	धरः	८. धारण किये थे
शौरिः	४. भगवान् श्रीकृष्ण	स्रग्वी	९. गले में वन माला थी
स्मयमान	१. मन्द-मन्द मुसकान युक्त	साक्षात्	१०. उनका रूप साक्षात्
मुख	२. मुख	मन्मथ	११. कामदेव के भी
अम्बुजः ।	३. कमल वाले	मन्मथः ॥	१२. मन को हरने वाला था

श्लोकार्थ—मन्द-मन्द मुसकान युक्त मुख वाले भगवान् श्रीकृष्ण उन गोपियों के मध्य प्रकट हो गये । वे पीताम्बर धारण किये थे । गले में वनमाला थी । उनका रूप साक्षात् कामदेव के भी मन को हरने वाला था ॥

तृतीयः श्लोकः

तं विलोक्यागतं प्रेष्ठं प्रीत्युत्फुल्लदृशोऽबलाः ।
उत्तस्थुर्युगपत् सर्वास्तन्वः प्राणमिवागतम् ॥३॥

पदच्छेद— तम् विलोक्य आगतम् प्रेष्ठम् प्रीति उत्फुल्लदृशः अबलाः ।
उत्तस्थुः युगपत् सर्वाः तन्वः प्राणम् इव आगतम् ॥

शब्दार्थ—

तम्	१.	उन	उत्तस्थुः	१०.	उठ खड़ी हुईं
विलोक्य	४.	देखकर	युगपत्	९.	एक साथ ही
आगतम्	२.	आये हुये	सर्वाः	८.	वे सब
प्रेष्ठम्	३.	परम प्रियतम श्रीकृष्ण	तन्वः	१४.	शरीर में स्फूर्ति आ जाती है
प्रीति	५.	प्रसन्नता के कारण	प्राणम्	१२.	प्राणों का
उत्फुल्लदृशः	७.	नेत्र खिल उठे	इव	११.	जैसे
अबलाः ।	६.	गोपियों के	आगतम् ॥	१३.	सञ्चार हो जाने से

श्लोकार्थ—उन आये हुये परम प्रियतम श्रीकृष्ण को देखकर प्रसन्नता के कारण गोपियों के नेत्र खिल उठे। वे सब एक साथ ही उठ खड़ी हुईं। जैसे प्राणों का सञ्चार हो जाने से शरीर में स्फूर्ति आ जाती है ॥

चतुर्थः श्लोकः

काचित् कराम्बुजं शौरेर्जगृहेऽञ्जलिना मुदा ।
काचिद् दधार तद्बाहुमंसे चन्दनरूषितम् ॥४॥

पदच्छेद — काचित् कर अम्बुजम् शौरेः जगृहे अञ्जलिना मुदा ।
काचित् दधार तत् बाहुम् अंसे चन्दन रूषितम् ॥

शब्दार्थ—

काचित्	१.	एक गोपी ने	काचित्	८.	दूसरी गोपी ने
कर	४.	कर	दधार	१४.	रख लिया
अम्बुजम्	५.	कमल को	तत्	९.	उनके
शौरेः	३.	श्रीकृष्ण के	बाहुम्	१२.	भुजदण्ड को
जगृहे	७.	ले लिया तथा	अंसे	१३.	अपने कन्धे पर
अञ्जलिना	६.	अपने दोनों हाथों में	चन्दन	१०.	चन्दन
मुदा ।	२.	बड़े प्रेम से	रूषितम् ॥	११.	चर्चित

श्लोकार्थ —एक गोपी ने बड़े प्रेम से श्रीकृष्ण के कर कमल को अपने दोनों हाथों में ले लिया तथा दूसरी गोपी ने उनके चन्दन चर्चित भुज दण्ड को अपने कन्धे पर रख लिया ॥

पञ्चमः श्लोकः

काचिदञ्जलिनागृह्णात्तन्वी ताम्बूलचर्वितम् ।
एका तदङ्घ्रिकमलं सन्तप्ता स्तनयोरधात् ॥५॥

पदच्छेद— काचित् अञ्जलिना अगृह्णात् तन्वी ताम्बूल चर्वितम् ।
एका तत् अङ्घ्रि कमलम् सन्तप्ता स्तनयोः अधात् ॥

शब्दार्थ—

काचित्	१. तीसरी	एका	७. चौथी गोपी ने
अञ्जलिना	५. अपने हाथों में	तत् अङ्घ्रि	८. उनके चरण
अगृह्णात्	६. ले लिया (तथा)	कमलम्	९. कमलों को
तन्वी	२. सुन्दरी ने	सन्तप्ता	१०. अपने सन्तप्त
ताम्बूल	४. पान	स्तनयोः	११. वक्षः स्थल पर
चर्वितम् ।	३. भगवान् का चबाया हुआ	अधात् ॥	१२. रख लिया

श्लोकार्थ—और तीसरी सुन्दरी ने भगवान् का चबाया हुआ पान अपने हाथों में ले लिया । तथा चौथी गोपी ने उनके चरण कमलों को अपने सन्तप्त वक्षः स्थल पर रख लिया ॥

षष्ठः श्लोकः

एका भ्रुकुटिमाबध्य प्रेमसंरम्भविह्वला ।
घ्नतीवैक्षत् कटाक्षेपैः संदष्टदशनच्छदा ॥६॥

पदच्छेद— एका भ्रुकुटिम् आबध्य प्रेमसंरम्भ विह्वला ।
घ्नतीव ऐक्षत् कटाक्षेपैः संदष्ट दशनचछदा ॥

शब्दार्थ—

एका	१. पाँचवीं गोपी	घ्नतीव	११. बींधती हुई उनकी ओर
भ्रुकुटिम्	५. भौंहें	ऐक्षत्	१२. ताकने लगी
आबध्य	६. चढ़ाकर	कटाक्षेपैः	१०. अपने कटाक्ष बाणों से
प्रेम	२. प्रणय	सन्दष्ट	९. दबाकर
संरम्भ	३. कोप से	दशन	७. दाँतों से
विह्वला ।	४. विह्वल होकर	च्छदा ॥	८. ओठ

श्लोकार्थ—पाँचवीं गोपी प्रणय कोप से विह्वल होकर-भौंहें चढ़ाकर दाँतों से ओठ दबाकर अपने कटाक्ष बाणों से बींधती हुई उनकी ओर ताकने लगी ॥

सप्तमः श्लोकः

अपरानिमिषद्दृग्भ्यां जुषाणा तन्मुखाम्बुजम् ।
आपीतमपि नातृप्यत् सन्तस्तच्चरणं यथा ।।७।।

पदच्छेद— अपरा अनिमिषद् दृग्भ्याम् जुषाणा तत् मुख अम्बुजम् ।
आपीतम् अपि न अतृप्यत् सन्तः तत् चरणम् यथा ।।

शब्दार्थ—

अपरा	१. छठी गोपी	आपीतम्	८.	परन्तु उसका पान करते हुये
अनिमिषद्	२. अपने निर्निमेष	अपि	१०.	नहीं हुई
दृग्भ्याम्	३. नयनों से	न अतृप्यत्	९.	वह वैसे ही तृप्त
जुषाणा	७. मकरन्द रस पान करने लगी	सन्तः	१२.	सन्तजन
तत्	४. उनके	तत्	१३.	उनके
मुख	५. मुख	चरणम्	१४.	चरणों के दर्शन से तृप्त नहीं होते हैं
अम्बुजम् ।	६. कमल का	यथा ।।	११.	जैसे

श्लोकार्थ—छठी गोपी अपने निर्निमेष नयनों से उनके मुख कमल का मकरन्द रस पान करने लगीं। परन्तु उसका पान करते हुये वह वैसे ही तृप्त नहीं हुई जैसे सन्त जन उनके चरणों के दर्शन से तृप्त नहीं होते हैं ।।

अष्टमः श्लोकः

तं काचिन्नेत्ररन्ध्रेण हृदिकृत्य निमील्य च ।
पुलकाङ्ग्युपगुह्यास्ते योगीवानन्दसम्प्लुता ।।८।।

पदच्छेद— तम् काचित् नेत्ररन्ध्रेण हृदि कृत्य निमील्य च ।
पुलक अङ्ग उपगुह्य आस्ते योगी इव आनन्द सम्प्लुता ।।

शब्दार्थ—

तम्	४. भगवान् को	पुलक अङ्ग	९.	उसका शरीर पुलकित हो गया और
काचित्	१. सातवीं गोपी	उपगुह्य	८.	भगवान् का आलिङ्ग करने से
नेत्र	२. नेत्रों के	आस्ते	१४.	हो गयीं
रन्ध्रेण	३. मार्ग से	योगी	१०.	वह योगियों के
हृदि	५. अपने हृदय में	इव	११.	समान
कृत्य	६. ले गयीं और	आनन्द	१२.	परमानन्द में
निमील्य च ।	७. फिर उसने आँखें बन्द कर लीं	सम्प्लुता ।।	१३.	मग्न

श्लोकार्थ—सातवीं गोपी नेत्रों के मार्ग से भगवान् को अपने हृदय में ले गयी। और उसने आँखें बन्द कर लीं। भगवान का आलिङ्गन करने से उसका शरीर पुलकित हो गया और वह योगियों के समान परमानन्द में मग्न हो गयी ।।

नवमः श्लोकः

सर्वास्ताः केशवालोकपरमोत्सवनिर्वृताः ।
जहुर्विरहजं तापं प्राज्ञं प्राप्य यथा जनाः ॥९॥

पदच्छेद — सर्वास्ताः केशव आलोक परम उत्सव निर्वृताः ।
जहुः विरहजम् तापम् प्राज्ञम् प्राप्य यथा जनाः ॥

शब्दार्थ—

सर्वास्ताः	३. उन समस्त गोपियों को	जहुः	९. समाप्त हो गया
केशव	१. श्रीकृष्ण के	विरहजम्	७. श्रीकृष्ण के विरह से उत्पन्न
आलोक	२. दर्शन से	तापम्	८. सन्ताप वैसे ही
परम	४. परम आनन्द और	प्राज्ञम्	११. ज्ञानी सन्त को
उत्सव	५. उल्लास	प्राप्य	१२. पाकर संसार की पीडा से मुक्त हो जाते हैं
निर्वृताः	६. प्राप्त हुआ	यथा जनाः ॥	१०. जैसे मुमुक्षु जन

श्लोकार्थ—श्रीकृष्ण के दर्शन से उन समस्त गोपियों को परम आनन्द और उल्लास प्राप्त हुआ । श्रीकृष्ण के विरह से उत्पन्न सन्ताप वैसे ही समाप्त हो गया जैसे मुमुक्षुजन ज्ञानी सन्त को पाकर संसार की पीडा से मुक्त हो जाते हैं ॥

दशमः श्लोकः

ताभिर्विधूतशोकाभिर्भगवानच्युतो वृतः ।
व्यरोचताधिकं तात पुरुषः शक्तिभिर्यथा ॥१०॥

पदच्छेद — ताभिः विधूत शोकाभिः भगवान् अच्युतः वृतः ।
व्यरोचत अधिकम् तात पुरुषः शक्तिभिः यथा ॥

शब्दार्थ—

ताभिः	४. उन गोपियों से	व्यरोचत	९. शोभायमान हो रहे थे
विधूत	३. मुक्त हुई	अधिकम्	८. वैसे ही अधिक
शोकाभिः	२. विरह व्यथा से	तात	१. हे परीक्षित्
भगवान्	६. भगवान्	पुरुषः	१२. परमेश्वर शोभायमान होते हैं
अच्युतः	७. श्याम सुन्दर	शक्तिभिः	११. शक्तियों से सेवित
वृतः ।	५. घिरे हुये	यथा ॥	१०. जैसे

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! विरह व्यथा से मुक्त हुई उन गोपियों से घिरे हुये भगवान् श्याम सुन्दर वैसे ही अधिक शोभायमान हो रहे थे, जैसे शक्तियों से सेवित परमेश्वर शोभायमान होते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

ताः समादाय कालिन्द्या निर्विश्य पुलिनं विभुः ।

विकसत्कुन्दमन्दारसुरभ्यनिलषट्पदम् ॥११॥

पदच्छेद— ताः समादाय कालिन्द्याः निर्विश्य पुलिनम् विभुः ।

विकसत् कुन्द मन्दार सुरभि अनिल षट्पदम् ॥

शब्दार्थ—

ताः	२. उन्हें	विकसत्	७. उस समय खिले हुये
समादाय	३. लेकर	कुन्द	८. कुन्द और
कालिन्द्याः	४. यमुना जी के	मन्दार	९. मन्दार के पुष्पों की
निर्विश्य	६. प्रवेश किया	सुरभि	१०. सुगन्ध से युक्त
पुलिनम्	५. पुलिन में	अनिल	११. वायु के कारण
विभुः ।	१. भगवान् श्रीकृष्ण ने	षट्पदम् ॥	१२. मतवाले भौंरे गूंज रहे थे

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीकृष्ण ने उन्हें लेकर यमुना जी के पुलिन में प्रवेश किया । उस समय खिले हुये कुन्द और मन्दार के पुष्पों की सुगन्ध से युक्त मतवाले भौंरे गूंज रहे थे ॥

द्वादशः श्लोकः

शरच्चन्द्रांशुसन्दोहध्वस्तदोषातमः शिवम् ।

कृष्णाया हस्ततरलाचितकोमलबालुकम् ॥१२॥

पदच्छेद— शरत् चन्द्रांशु सन्दोह ध्वस्त दोषा तमः शिवम् ।

कृष्णायाः हस्त तरल अचित कोमल बालुकम् ॥

शब्दार्थ—

शरत्	१. शरद् पूर्णिमा के	कृष्णायाः	६. यमुना जी ने
चन्द्रांशु	२. चन्द्र की चाँदनी ने	हस्त	८. हाथों से
सन्दोह	४. समूह को	तरल	७. अपनी चञ्चल तरंगों के
ध्वस्त	५. नष्ट कर दिया था	आचित	१२. रंग-मँच बना दिया था
दोषा तमः	३. रात के अन्धकार	कोमल	१०. सुकोमल
शिवम् ।	११. सुखकर	बालुकम् ॥	९. बालुका का

श्लोकार्थ—शरद् पूर्णिमा के चन्द्र की चाँदनी ने रात के अन्धकार समूह को नष्ट कर दिया था । यमुना जो ने अपनी चञ्चल तरंगों के हाथों और बालुका का सुकोमल रंगमँच बना दिया था ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तद्दर्शनाह्लादविधूतहृद्रुजो मनोरथान्तं श्रुतयो यथा ययुः ।
स्वैरुत्तरीयैः कुचकुङ्कुमाङ्कितैरचीक्लृपन्नासनमात्मबन्धवे ॥१३॥

पदच्छेद — तत् दर्शन आह्लाद विधूत हृद् रुजः मनोरथ अन्तम् श्रुतयः यथा ययुः ।
स्वैः उत्तरीयैः कुचकुङ्कुम अङ्कितैः अचीक्लृपन् आसनम् आत्मबन्धवे ॥

शब्दार्थ—

तत् दर्शन	१. उन श्रीकृष्ण के दर्शन के	ययुः	८.	कृतकृत्य हो जाती हैं ।
आह्लाद	२. आनन्द से	स्वैः उत्तरीयैः	११.	अपनी ओढ़नी को
विधूत	४. शान्त हो गयी	कुचकुङ्कुम	९.	वक्षः स्थल पर लगी केसर
हृद् रुजः	३. उन गोपियों के हृदय की पीडा वैसे ही	अङ्कितैः	१०.	से चिह्नित
मनोरथ	६. कामनाओं से	अचीक्लृपन्	१४.	बिछा दिया
अन्तम्	७. परे पहुँच कर	आसनम्	१३.	बैठने के लिये
श्रुतयः यथा ।	५. जैसे श्रुतियाँ अन्ततः	आत्मबन्धवे ॥	१२.	अपने प्यारे श्याम सुन्दर के

श्लोकार्थ—उन श्रीकृष्ण के दर्शन के आह्लाद से उन गोपियों के हृदय की पीड़ा वैसे ही शान्त हो गयी जैसे श्रुतियाँ अन्ततः कामनाओं से परे पहुँच कर कृतकृत्य हो जाती हैं । वक्षः स्थल पर लगी केसर से चिह्नित अपनी ओढ़नी को अपने प्यारे श्याम सुन्दर के बैठने के लिये बिछा दिया ।।

चतुर्दशः श्लोकः

तत्रोपविष्टो भगवान् स ईश्वरो योगेश्वरान्तर्हृदि कल्पितासनः ।
चकास गोपीपरिषद्गतोऽर्चितस्त्रैलोक्यलक्ष्म्येकपदं वपुर्दधत् ॥१४॥

पदच्छेद — तत्र उपविष्टः भगवान् सः ईश्वरः योगेश्वर अन्तः हृदि कल्पित आसनः ।
चकास गोपी परिषद् गतः अर्चितः त्रैलोक्य लक्ष्मी एक पदम् वपुः दधत् ।।

शब्दार्थ—तत्र	६. गोपियों की ओढ़नी पर	चकास	८.	शोभायमान हो रहे थे
उपविष्टः	७. बैठे हुये अत्यन्त	गोपीपरिषद्	१२.	गोपियों के समूह के
भगवान् सः ईश्वरः	५. वे भगवान् श्याम सुन्दर	गतः	१३.	मध्य उनके द्वारा
योगेश्वर	१. बड़े-बड़े योगीश्वरों के	अर्चितः	१४.	पूजित हो रहे थे
अन्तः हृदि	२. हृदय के अन्दर	त्रैलोक्य लक्ष्मी	९.	तीनों लोकों का ऐश्वर्य
कल्पित	३. कल्पित किये हुए	एक पदम्	१०.	जिनका एक अंशमात्र है
आसनः ।	४. आसन पर बैठने वाले	वपुः दधत् ।।	११.	ऐसे सुन्दर शरीर को धारण किये हुये वे

श्लोकार्थ—बड़े-बड़े योगीश्वरों के हृदय के अन्दर कल्पित किये हुये आसन पर बैठने वाले वे भगवान् श्याम सुन्दर गोपियों की ओढ़नी पर बैठे हुये अत्यन्त शोभायमान हो रहे थे । तीनों लोकों का ऐश्वर्य जिनका एक अंशमात्र है, ऐसे सुन्दर शरीर को धारण किये हुये वे गोपियों के समूह के मध्य उनके द्वारा पूजित हो रहे थे ।।

पञ्चदशः श्लोकः

सभाजयित्वा तमनङ्गदीपनं सहासलीलेक्षणविभ्रमभ्रुवा।
संस्पर्शनेनाङ्ककृताङ्घ्रिहस्तयोः संस्तुत्य ईषत्कुपिता बभाषिरे ॥१५॥

पदच्छेद— सभाजयित्वा तम् अनङ्ग दीपनम् सहास लीला ईक्षण विभ्रम भ्रुवा।
संस्पर्शनेन अङ्क कृत अङ्घ्रि हस्तयोः संस्तुत्य ईषत् कुपिताः बभाषिरे।

शब्दार्थ—

सभाजयित्वा	७. सम्मान किया	संस्पर्शनेन	११.	और वे उन्हें दबाने लगीं
तम्	३. उन श्री कृष्ण का	अङ्ककृत	१०.	अपनी गोद में रख लिया
अनङ्ग	१. प्रेम और आकांक्षा को	अङ्घ्रि	८.	किसी ने उनके चरणों को
दीपनम्	२. उभाड़ने वाले	हस्तयोः	९.	किसी ने हाथों को
सहास	४. गोपियों ने मन्द मुसकान,	संस्तुत्य	१२.	उनकी प्रशंसा करती हुई
लीलाईक्षण	५. विलास पूर्ण चितवन और	ईषत्कुपिता	१३.	तनिक रूठ कर
विभ्रमभ्रुवा।	६. तिरछी भौंहों से	बभाषिरे ॥	१४.	कहने लगीं

श्लोकार्थ—प्रेम और आकांक्षा को उभाड़ने वाले उन श्रीकृष्ण का गोपियों ने मन्द मुसकान, विलास भरी चितवन और तिरछी भौंहों से सम्मान किया। किसी ने उनके चरणों को और किसी ने उनके हाथों को अपनी गोद में रख लिया। और वे उन्हें दबाने लगीं। तथा उनकी प्रशंसा करती हुई वे तनिक रूठकर कहने लगीं॥

षोडशः श्लोकः

गोप्य ऊचुः—भजतोऽनुभजन्त्येक एक एतद्विपर्ययम्।
नोभयांश्च भजन्त्येक एतन्नो ब्रूहि साधु भोः ॥१६॥

पदच्छेद— भजतः अनुभजन्ति एके एके एतद् विपर्ययम्।
न उभयान् च भजन्ति एके एतत् नः ब्रूहि साधु भोः॥

शब्दार्थ—

भजतः	३. प्रेम करने वालों से ही	च	८.	और
अनुभजन्ति	४. प्रेम करते हैं	भजन्ति	११.	करते हैं
एके	२. कुछ लोग तो	एके	९.	कुछ लोग तो
एके	५. कुछ लोग	एतत्	१२.	इनमें आपको
एतत्	६. इसके	नः ब्रूहि	१४.	हमें बताइये
विपर्ययम्।	७. विपरीत आचरण करते हैं	साधु	१३.	कौन अच्छा लगता है यह
न उभयान्	१०. उन दोनों से ही प्रेम नहीं	भोः॥	१.	हे नट नागर!

श्लोकार्थ—हे नट नागर! कुछ लोग तो प्रेम करने वालों से ही प्रेम करते हैं। कुछ लोग इसके विपरीत आचरण करते हैं। और कुछ लोग उन दोनों से ही प्रेम नहीं करते हैं। इनमें आपको कौन अच्छा लगता है। यह हमें बताइये॥

सप्तदशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच— मिथो भजन्ति ये सख्यः स्वार्थैकान्तोद्यमा हि ते ।
न तत्र सौहृदं धर्मः स्वार्थार्थं तद्धि नान्यथा ॥१७॥

पदच्छेद— मिथः भजन्ति ये सख्यः स्वार्थ एकान्त उद्यमाः हि ते ।
न तत्र सौहृदम् धर्मः स्वार्थ अर्थम् तत् हि न अन्यथा ॥

शब्दार्थ—

मिथः	२.	प्रेम करने पर	न तत्र	८.	उनमें न तो
भजन्ति	३.	प्रेम करते हैं	सौहृदम्	९.	सौहार्द है
ये सख्यः	१.	मेरी प्रिय सखियो ! जो लोग	धर्मः	१०.	न धर्म है
स्वार्थ	७.	स्वार्थ को लेकर है	स्वार्थ	१२.	स्वार्थ को
एकान्त	५.	सारा	अर्थम्	१३.	लेकर ही है
उद्यमाः	६.	उद्योग	तत् हि	११.	उनका प्रेम
हि ते ।	४.	उनका तो	न अन्यथा ॥	१४.	इसके अतिरिक्त कोई प्रयोजन नहीं है

श्लोकार्थ—मेरी प्रिय सखियो ! जो लोग प्रेम करने पर प्रेम करते हैं उनका तो सारा उद्योग स्वार्थ को लेकर है। उनमें न तो सौहार्द्र है। न धर्म है। उनका प्रेम स्वार्थ को लेकर ही है। इसके अतिरिक्त कोई प्रयोजन नहीं है ॥

अष्टादशः श्लोकः

भजन्त्यभजतो ये वै करुणाः पितरो यथा ।
धर्मो निरपवादोऽत्र सौहृदं च सुमध्यमाः ॥१८॥

पदच्छेद— भजन्ति अभजतः ये वै करुणाः पितरः यथा ।
धर्मः निरपवादः अत्र सौहृदम् च सुमध्यमाः ॥

शब्दार्थ—

भजन्ति	७.	प्रेम करते हैं	धर्मः	१२.	धर्म भी होता है
अभजतः	६.	प्रेम न करने वालों से	निरपवादः	११.	निश्छल
ये वै	५.	वैसे ही जो लोग	अत्र	८.	उनके व्यवहार में
करुणाः	४.	करुणाशील होते हैं	सौहृदम्	९.	सौहार्द होता है
पितरः	३.	माता-पिता स्वभाव से ही	च	१०.	और
यथा ।	२.	जिस प्रकार	सुमध्यमाः ॥	१.	हे सुन्दरियो !

श्लोकार्थ—हे सुन्दरियो ! जिस प्रकार माता-पिता स्वभाव से ही करुणाशील होते हैं वैसे ही जो लोग प्रेम न करने वालों से प्रेम करते हैं, उनके व्यवहार में सौहार्द होता है। और निश्छल धर्म भी होता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

भजतोऽपि न वै केचिद् भजन्त्यभजतः कुतः ।
आत्मारामा ह्याप्तकामा अकृतज्ञा गुरुद्रुहः ॥१६॥

पदच्छेद— भजतः अपि न वै केचित् भजन्ति अभजतः कुतः ।
आत्मारामा हि आप्त कामाः अकृतज्ञाः गुरु द्रुहः ॥

शब्दार्थ—

भजतः अपि	२. प्रेम करने वालों से भी	आत्मारामाः	७. अपने आप में ही मस्त रहने वाले
न वै	३. प्रेम नहीं करते तब	हि आप्त	८. पूर्ण
केचित्	१. कुछ लोग जब	कामाः	६. काम
भजन्ति	६. प्रेम करेंगे । ऐसे लोग	अकृतज्ञाः	१०. उपकार न मानने वाले और
अभजतः	४. प्रेम न करने वालों से	गुरु	११. गुरु जनों से भी
कुतः ।	५. कैसे	द्रुहः ॥	१२. द्रोह करने वाले होते हैं

श्लोकार्थ—कुछ लोग जब प्रेम करने वालों से भी प्रेम नहीं करते, तब प्रेम न करने वालों से कैसे प्रेम करेंगे । ऐसे लोग अपने आप में ही मस्त रहने वाले, पूर्ण काम, उपकार न मानने वाले और गुरुजनों से भी द्रोह करने वाले होते हैं ॥

विंशः श्लोकः

नाहं तु सख्यो भजतोपि जन्तून् भजाम्यमीषामनुवृत्तिवृत्तये ।
यथाधनो लब्धधने विनष्टे तच्चिन्तयान्यन्निभृतो न वेद ॥२०॥

पदच्छेद - न अहम् तु सख्यः भजतः अपि जन्तून् भजामि अमीषाम् अनुवृत्ति वृत्तये ।
यथः अधनः लब्धधने विनष्टे तत् चिन्तया अन्य निभृतः न वेद ॥

शब्दार्थ—

न	७. प्रेम नहीं	यथा	६. जैसे
अहम् तु सख्यः	१. हे गोपियों ! मैं तो	अधनः	१०. निर्धन व्यक्ति को
भजतः	२. प्रेम करने वाले	लब्धधने	११. कभी बहुत साधन मिल जाय और
अपि जन्तून्	३. प्राणियों से भी	विनष्टे	१२. फिर खो जाय तो
भजामि	८. करता (क्योंकि)	तत्	१३. उस
अमीषाम्	४. उनकी	चिन्तया	१४. चिन्ता से दुःखी
अनुवृत्ति	६. अपने में लगाने के लिये	अन्य निभृतः	१५. भरा होने के कारणअन्य कुछ
वृत्तये ।	५. चित्त वृत्ति को	न वेद ॥	१६. नहीं जानता है

श्लोकार्थ—हे गोपियो ! मैं तो प्रेम करने वाले प्राणियों से भी उनकी चित्त वृत्ति को अपने में लगाने के लिये प्रेम नहीं करता । क्योंकि जैसे निर्धन व्यक्ति को कभी बहुत धन मिल जाय और फिर खो जाय तो उस खोये हुये धन की चिन्ता से भरा होने के कारण अन्य कुछ नहीं जानता है ॥

एकविंशः श्लोकः

एवं मदर्थोज्झितलोकवेदं स्वानां हि वो मय्यनुवृत्तयेऽबलाः ।
मया परोक्षं भजता तिरोहितं मासूयितुं मार्हथ तत् प्रियं प्रियाः ॥२१॥

पदच्छेद— एवम् मद् अर्थ उज्झित लोक वेदं स्वानाम् हि वः मयि अनुवृत्तये अबलाः ।
मया परोक्षम् भजता तिरोहितम् माअसूयितुम् मा अर्हथ तत् प्रियम् प्रियाः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	३.	इस प्रकार	मया परोक्षम्	९.	इसलिये मैं परोक्षरूप से
मद् अर्थः	४.	मेरे लिये	भजता	१०.	तुमसे प्रेम करता हुआ
उज्झित	७.	छोड़ दिया है अतः	तिरोहितम्	११.	छिप गया था
लोक वेदम्	५.	लोक मर्यादा वेद मार्ग और	माअसूयितुम्	१२.	मेरे प्रेम में दोष निकालना
स्वानाम्	६.	सगे सम्बन्धियों को भी	माअर्हथ	१३.	उचित नहीं है
हि वः	२.	तुम लोगों ने	तत्	१४.	अतः
मयि अनुवृत्तये	८.	तुम्हारी चित्त वृत्ति मुझमें लगी रहे	प्रियम्	१६.	मैं तुम्हारा प्यारा हूँ
अबलाः ।	१.	हे गोपियो !	प्रियाः ॥	१५.	तुम मेरी प्यारी हो

श्लोकार्थ—हे गोपियो ! तुम लोगों ने इस प्रकार मेरे लिये लोक मर्यादा, वेद मार्ग और सगे सम्बन्धियों को भी छोड़ दिया है । अतः तुम्हारी चित्तवृत्ति मुझमें लगी रहे । इसलिये मैं परोक्षरूप से तुम से प्रेम करता हुआ छिप गया था । मेरे प्रेम में दोष निकालना उचित नहीं है । अतः तुम मेरी प्यारी हो और मैं तुम्हारा प्यारा हूँ ॥

द्वाविंशः श्लोकः

न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः ।
या माभजन् दुर्जरगेहशृङ्खलाः संवृश्च्य तद् वः प्रतियातु साधुना ॥२२॥

पदच्छेद— न पारये अहम् निरवद्य संयुजाम् स्वसाधु कृत्यम् विबुध आयुषा अपि वः ।
याः मा अभजन् दुर्जर गेह शृङ्खलाः संवृश्च्य तद् वः प्रतियातु साधुना ॥

शब्दार्थ—

न पारये	११.	उपकार नहीं चुका सकता हूँ	याः माअभजन्	२.	जो यह प्रेम में
अहम्निरवद्य	६.	मैं निर्मल	दुर्जरगेह	३.	कठिन घर गृहस्थी की
संयुजाम्	७.	संयोगवाली तुम्हारा	शृङ्खलाः	४.	बेड़ियों को
स्व साधु	८.	अपने शुभ	संवृश्च्य	५.	तोड़ दिया है तो
कृत्यम् विबुध	९.	कार्यों से अनन्त	तत् वः	१२.	इसलिये तुम लोग
आयुषा अपि	१०.	वर्षों में भी	प्रतियातु	१४.	मुझे उऋण कर सकती हो
वः ।	१.	तुमने	साधुना ॥	१३.	अपने स्वभाव से ही सौम्य

श्लोकार्थ—हे गोपियो ! तुमने जो यह प्रेम में कठिन घर गृहस्थी की बेड़ियों को तोड़ दिया है तो मैं निर्मल संयोग वाली तुम्हारा अपने शुभ कार्यों से अनन्त वर्षों में भी उपकार नहीं चुका सकता हूँ । इसलिये तुम लोग अपने सौम्य स्वभाव से ही मुझे उऋण कर सकती हो ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे रासक्रीडायां गोपीसान्त्वनं नाम द्वात्रिंशः अध्यायः ॥३२॥